ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 95-96
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-10, No.-I, Issues-11 YEAR- June -2019

पं0 दीन दयाल उपाध्याय जी का शिक्षा के क्षेत्र में योगदान

पीयूष कुमार श्रीवास्तव

शोध अध्येता, समाजशास्त्र विभाग, महात्मा गांधी चित्रकूटग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट–सतना (मध्य प्रदेश)

Received- 01.05.2019, Revised- 07.05.2019, Accepted - 11.05.2019 E-mail: ayushitripathi070@gmail.com

सारांश : *सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े छात्रों के लिये देश में सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर कई योजना चलाई जा रही हैं। इन छात्रवृत्ति योजनाओं का उद्देश्य जो बहुत गरीब, पिछड़े, वनवासी जरूरतमंद प्रतिभावान छात्रों को शिक्षा का पूरा अवसर प्रदान करना है ताकि वे अपने सपनों को साकार कर सकें और विश्व में भारत का नाम ऊंचा कर सके और आर्थिक अभाव में उन्हें बीच में पढ़ाई छोड़नी न पड़े।*

शिक्षा, करियर, रोजगार की चर्चा आवश्यक है क्योंकि बिना सही राह पकड़े लक्ष्य को पाना असंभव है किसी विद्यार्थी का लक्ष्य केवल चमकता करियर नहीं होना चाहिये बल्कि समाज के विकास के लिए होना चाहिये।

विद्यार्थियों को बाकी के समाज से पृथक वर्ग मानना ठीक प्रतीत नहीं होता है। सर्व सामान्य जनता के गुण–विशेष ही युवकों में प्रगट होते हैं। अपरिपक्व अवस्था, अनुभवहीनता तथा वयसुलभ भावावेश के प्राबल्य के फलस्वरूप उनके क्रिया–कलाप दम्य उद्रेक के रूप में प्रकट होते हैं। आज के युवकों पर सद्वर्तन के कोई भी संस्कार नहीं किये जाते। उन्हें जीवन में एक प्रकार की अस्थिरता एवं असुरक्षितता दिखायी देती है। परिणाम यह हुआ है कि वे हताश हो गये हैं। जिसके लिये वे अपनी शक्तियां लगाएं और यत्न करें, ऐसा न तो कोई ध्येय उनके सामने है और न जनता में तथाकथित नेताओं अथवा मार्गदर्शकों का कोई प्रेरणादायक आदर्श ही है। गृह नाम की संस्था आज पूरी तरह ढह गई है। ये कुछ कारण हैं, जिसके फलस्वरूप क्षोभ, अशान्ति व उच्छृंखलता आदि बातें उत्पन्न होती हैं। इन्हीं को हम युवकों की अर्थात् विद्यार्थियों की अनुशासनहीनता कहते हैं।01

कुंजी शब्द – छात्रवृत्ति, बनवासी, प्रतिभावान, भावावेष, अपरिपक्व, उद्रेक, सद्वर्तन, हताष, उच्छृंखता।

भाषा समाज को जोड़ती है किन्तु भारतीय शिक्षा व्यवस्था में इस देश की भाषाओं को आपस मे लड़ाकर शिक्षा का स्तर कम करना है, सिर्फ अंग्रेजी को ज्ञान की भाषा मानकर भारतीय भाषाओं में संचित ज्ञान और इस देश की ज्ञान परंपरा से कटे रहकर आपस में लड़कर, दूसरे को हराते हुए, केवल निजी प्रदर्शन और उपलब्धियों पर इतराते हुए नजर आते हैं।

व्यक्ति और समाज का पहला संबंध शिक्षा के रूप में सामने आता है। यह शिक्षा ही व्यक्ति और समाज को मिला देती है। पैदा होते ही व्यक्ति को समाज शिक्षा देना प्रारंभ कर देता है। दूध पीना भी सीखना पड़ता है। फिर शिक्षा का संस्कार बढ़ता जाता है। माता, पिता, गुरू आदि के द्वारा जैसा सिखाया जाता है, व्यक्ति वैसे ही कर्म करना प्रारंभ करता है। वह समाज के लिए कर्म करता है। सामान्य लोगों को दिखता है कि वह अपने लिए कर्म करता है। लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है। वह कर्म के द्वारा समाज से जुड़ता है। उदाहरण के लिए किसान अनाज क्या अपने लिए पैदा करता है? नहीं, वह समाज के लिए पैदा करता है।02

पढ़ोगे लिखोगे बनोगे नवाव वाली सोच भारत में नवावी राज से पहले नहीं मिलती थी। हमारे यहां संदीपनी आश्रम में आपसी भेद से रहित कृष्ण सुदामा हो या वशिष्ट आश्रम में अन्य शिष्यों के समाज बल्कलधारी अयोध्या के राजपुत्र शिक्षा को भारत में एक अलग आयाम से देखा गया।

शिक्षा व्यक्ति का सामाजिक अधिकार है। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति समाज के साथ एकात्म होता है तथा अपने व्यक्तित्व की साधना के मार्ग तथा लक्ष्य को पाता है। शिक्षा के सहारे मानव की अद्यतन संचित ज्ञाननिधि हस्तांतरित होती है। इस पूंजी को लेकर ही मानव समष्टि को अपना योगदान करता है। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को इस योग्य बनाना है कि वह अपनी वृत्ति का अनुपालन करता हुआ राष्ट्र के एक उत्तरदायी एवं संवेदनशील घटक के नाते अपने कर्तव्यों को निर्वाह कर सके। साक्षरता, पुस्तक ज्ञान तथा तंत्रपटुता के साथ शारीरिक शक्ति का विकास बुद्धि उद्बोधन, शील–संवर्धन, आदर्शों का प्रतिस्थापन, सामाजिकता एवं शिष्टाचार का स्वभाव–निर्माण शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य हैं। स्पष्ट है कि यह शिक्षा राष्ट्रीय जीवनमूल्यों से अलग हटकर नहीं दी जा सकती। इस दृष्टि से शिक्षा के भारतीयकरण तथा अभिनवीकरण की आवश्यकता है, जिसकी कमी का अनुभव बहुत दिनों से व्यापक रूप से होते हुए भी उसे पूरा करने के लिए कोई कदम नहीं उठाए गए।03

भारत में हमारी साधना का एकमेव लक्ष्य मनः

अनुरूपी लेखक

शान्ति प्राप्त करना है महर्षि पतंजलि ने 'योग सूत्र' मै परामर्श दिया है कि किसी सुखी वैभव सम्पन्न सदाचारी एवं पुण्यवान व्यक्ति के प्रति ईष्या नहीं होनी चाहिये। बल्कि प्रसन्नता पूर्वक उसे साधुवाद देना चाहिए। स्वयं प्रेरणा से आत्मोन्नति का प्रयास करना चाहिए।

बच्चे को शिक्षा देना तो समाज के अपने ही हित में है। जन्म से तो मानव पशुवत् पैदा होता है। शिक्षा और संस्कार से तो वह समाज की अभिन्न घटक बनता है। जो काम समाज के अपने हित में हो, उसके लिए शुल्क लिया जाए यह तो उलटी बात है। कल्पना करें कि कल शिक्षा शुल्क का बहिष्कार करने अथवा उसे देने में असमर्थ होने के कारण बच्चे पढ़ना बंद कर दें। क्या समाज इस स्थिति को सहन करेगा? पेड़ लगाने और सींचने के लिए हम पेड़ से पैसा नहीं लेते। हम तो अपनी ओर से पूंजी लगाते हैं और जानते हैं कि पेड़ के फलने पर हमें फल मिलेंगे ही। शिक्षा भी इसी प्रकार का इंवेस्टमेंट है। व्यक्ति शिक्षित होने पर समाज के लिए काम करेगा ही, किन्तु जो व्यवस्था बचपन से ही हमें व्यक्तिवादी बनाती हो, उसमें समाज की अवहेलना करने वाले निकलें तो आश्चर्य ही क्या, भारत में सन् 1947 पूर्व सभी आश्रम में होती थी। केवल भिक्षा मांगने के लिए ब्रह्मचारी समाज में जाता था। कोई भी गृहस्थ ब्रह्मचारी को खाली नहीं लौटाता था। अर्थात् समाज द्वारा शिक्षा की व्यवस्था की जाती थी।04

समाचार पत्र तो जन–जीवन का प्रतिबिम्ब मात्र है। समाज की सब बुराइयां समाचार पत्रों में शीघ्र ही प्रकट होती है। आज हम राजनीतिक को तथा भौतिकवाद को बहुत महत्व देते हैं। इन बातों ने हमारी सब शक्तियों को ग्रस लिया है। अर्थात् इसी का बढ़ा–चढ़ा प्रतिबिम्ब हम समाचार पत्रों में पाते हैं। हमारे समाचार पत्र खलबली मचाने तथा पाप एवं अपराध–कथाओं की जुगाली करते रहने, में वर्ग का अनुभव करते हैं। इस वृत्ति में आमूलाग्र परिवर्तन आवश्यक है। राजनैतिक और आर्थिक पहलुओं को तथा उन क्षेत्रों में कार्य करने वाले व्यक्तियों को अत्यधिक महत्व देने एवं उन्हें आदर्श पुरूषों के रूप में चित्रित करने की अपेक्षा यदि परमेश्वर की तथाा मानवता की सेवा करने वाले व्यक्तियों को अधिक महत्व देते हैं, तो पत्रकारों द्वारा देश की महान सेवा होगी। इन ईश्वर–भक्तों के पास या मानवता के सेवकों के पास कदाचित् यमक–दमक अथक क्रियाशील रहते हैं। उनका अनुकरण होना चाहिये। उनका अनुयायित्व बढ़ना चाहिय। मुझे ऐसा लगता है कि मासिक और अन्य नियतकालिक पत्रिकाएं इस कार्य को भली भांति कर सकेंगी। दैनिक समाचार पत्रों के लिये यह सम्भव नहीं दिखता।05 अन्ततः वर्तमान अग्नि–परीक्षा में भारी मूल्य चुकाकर प्राप्त हुआ सबक हमें विस्मृत नहीं कर देना चाहिए। प्रथमतः, राष्ट्रीय एकता व उत्साह का ज्वार अपने तुच्छ राजनैतिक स्वार्थों के कारण बिखरने नहीं देना चाहिए; क्योंकि राष्ट्रीय भाव से जागृत एवं एकरस समाज ही प्रखर शक्तिशाली एवं वैभव सम्पन्न बन सकता है। द्वितीयतः, कठोर परिश्रम का वातावरण बनाये रखना आवश्यक है। प्रत्येक क्षेत्र में उत्कृष्ट उत्पादन में भारी वृद्धि होनी चाहिए, ताकि देश पूर्ण आत्म–निर्भर बन सके। अतः, हमारे समक्ष सर्वोच्च प्राथमिकता का कार्य आत्मबलिदानी, अनुशासित पौरूषवान् एवं प्रखर राष्ट्र–भाव से ओतप्रोत व्यक्तियों का निर्माण करना है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. माधव राव सदाशिव राव गोलवलकरः विचार नवनीत ज्ञान गंगा प्रकाशन भारतीय भवन बी0 15 न्यू कॉलोनी जयपुर राजस्थान पृ0 सं0 372
2. महेश चन्द्र शर्मा दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाड्. मय खण्ड 11 प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड नई दिल्ली – 110002 पृ0 सं0 199
3. महेश चन्द्र शर्मा दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाड्. मय खण्ड 11 प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड नई दिल्ली – 110002 पृ0 सं0 245
4. महेश चन्द्र शर्मा दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाड्. मय खण्ड 12 प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड नई दिल्ली – 110002 पृ0 सं0 90
5. माधव राव सदाशिव राव गोलवलकरः विचार नवनीत ज्ञान गंगा प्रकाशन भारतीय भवन बी0 15 न्यू कॉलोनी जयपुर राजस्थान पृ0 सं0 379

*****